भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-9, अंक-7	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-10.00
शुक्रवार, 11 जुला.' 86	मानद सहसम्पादक: डॉ. महेन्द्र दवे	प्रति अंक : 1.00

मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानन्दस्वामी

मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी ने अत्यधिक सेवा, त्याग, भक्ति, साधुता, सरलता, वैराग्यपूर्ण जीवन जीकर हमारे लिये आदर्श के रूप में अनुपम विरासत छोड़ी है। आइये, ऐसे अनादि अक्षरब्रह्म के जीवन प्रसंगों का सतत अध्ययन करें। उन प्रसंगों की स्मृति में रहकर अगर हम प्रार्थना करते रहेंगे तो हमारा जीवन धन्य हो जायेगा। हमारी अन्तर की प्रार्थना के फलस्वरूप प्रत्यक्ष स्वरूपों हमारे मन, स्वभाव, काम-क्रोध-लोभ-वासना, हठ-मान-ईर्ष्या जैसी वृत्तियों का रूपान्तर करके दिव्य कर देंगे। सामान्य मानव से महामानव–महामानव से देव और देव की श्रेणी से प्रभु के पनौते पुत्र की श्रेणी में रख देंगे !

महाराज दादाखाचर के दरबार में संध्या आरती के पश्चात् संतों के साथ नित्य भगवत वार्ता करते थे।

वर्षा ऋतु के दिनों में एक बार महाराज संतों के साथ भगवत्वार्ता पूरी करके बहनों की सभा में बातें करने दरबार में गये। सब संत अपने-अपने स्थान पर जाकर निजी भजन करके सो गये। परन्तु मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी जो अविरत दृष्टि से महाराज का दर्शन करने पर भी तृप्त नहीं हुए थे–वह बरामदे के आगे बनी मुंडेर के नीचे खड़े रहे जहां से पानी भी उन पर टपक रहा था और लगभग भीग से गये थे। आधी रात को सद्. मुक्तानन्दस्वामी जब लघुशंका करने निकले तो अंधेरे में परछाई जैसी देखकर पूछाः 'वहां कौन खड़ा है?' तब स्वामी ने उत्तर दिया 'मैं हूँ निर्गुणानन्द'। तो सद्. मुक्तानन्दस्वामी ने दुबारा पूछा कि 'इतनी रात को यहां क्यों खड़े हो?' यह सुनकर गुणातीतानन्दस्वामी उनके नजदीक आये और हाथ जोड़कर बोले कि महाराज दरबार में गये हैं–वहां से अब सोने जाने निकलेंगे। उनके दर्शन करने के लोभ से यहां खड़ा हूँ। सद्. मुक्तानन्दस्वामी ने कहा कि अभी ही तो रात की सभा में दर्शन करे। गुणातीतानन्दस्वामी बोले कि हां दर्शन करे, पर मन नहीं भरा। यह सुनकर–सद्. मुक्तानन्दस्वामी के आश्चर्य का पार न रहा। वह मन में विचार करने लगे अहो ! कैसी श्रद्धा है? नहीं देह की चिन्ता, न ही निद्रा की। यह साधु श्रीजी महाराज की मूर्ति का अंतर में अखंड दर्शन करता है तब भी प्रत्यक्ष महाराज की मूर्ति के दर्शन के लिए कितनी आकुलता? गुणातीतानन्द

स्वामी बरसात में भीगते हुए उसी दशा में लगभग दो घंटे खड़े रहे। काफी रात बीत जाने के बाद महाराज दरबार में से निकलकर 'अक्षरओरडी' में सोने जाने उस रास्ते से ही पसार हुए तब अंधेरे में से महाराज के दर्शन की झलक पाकर बाद में गुणातीतानन्द स्वामी सोने के लिये गये....स्वयं प्रभु के रहने का अक्षरधाम होते हुए भी कैसा अपने प्रभु का दर्शन के लिये अप्रतिम इश्क... ! जबकि स्वयं अक्षरब्रह्म का अनादि स्वरूप गुणातीतानन्दस्वामी सम्पूर्ण होते हुए भी कैसे सेवकभाव से ही जिये तो हमें मान की अपेक्षा क्यों रखनी? महाराज को अपने भीतर सांगोपांग अखंड धारण करने के बावजूद भी प्रत्यक्ष स्वरूप के दर्शन की उन्हें कितनी चाहना थी—रसधन मूर्ति में खो जाने की कितनी लालसा थी उन्हें.....!

एक बार काठियावाड़ में भयंकर अकाल पड़ा। इस परिस्थिति में महाराज ने साधुओं के अलग मण्डल बनाकर जगह-जगह भेजे। सद्. मुक्तानन्दस्वामी के साथ गुणातीतानन्दस्वामी, आनंदस्वामी आदि संतों को सूरत भेजे। सद्. मुक्तानन्दस्वामी ने ऐसी व्यवस्था की थी कि दो साधु शहर में झोली मांगने जायें। एक साधु झोली के आगे का छोर पकड़े उसमें एक ऐसा भी नियम था कि अगर झोली में भिक्षा डालने कोई स्त्री आये और उसके सामने यदि साधु देख ले तो उस साधु को एक दिन उपवास करना और अगले दिन झोली मांगने नहीं जाना। स्वामी की महिमा सद्. मुक्तानन्दस्वामी जानते थे कि—यह स्वामी एक ऐसे हैं जिन्हें रोज भेजे जायें। स्वामी को तो महाराज की मूर्ति के सिवा अन्य कहीं निगाह जाती ही नहीं थी। उनकी आंखों में बसी थी केवल महाराज की मनोहारी मूर्ति..! इस प्रकार रोज गुणातीतानन्दस्वामी के साथ जाने वाला साधु बदला जाये पर स्वामी की दृष्टि तो अखंड़ नियम में थी। उन्हें तो सर्वत्र-हरेक में अखंड महाराज के ही दर्शन थे। 'योगश्चित्तवृत्ति निरोधः'—योग का यह परम लक्ष्य स्वामी को महाराज की मूर्ति में अखंड सिद्ध था ! और इसीलिये जिस पर स्वामी की निगाह पड़ती थी उसके मोक्षद्वार खुल जाते थे।

इस प्रकार गुणातीतानन्दस्वामी ने छः मास तक सूरत में 'नारायण हरे सच्चिदानन्द प्रभो' का अलख जगाकर भिक्षा मांगी थी।

उन दिनों एक बार स्वामी के साथ आनंदस्वामी के जाने की बारी आई थी। स्वामी तो भिक्षा मांगते समय स्थिर दृष्टि रखकर चलते थे। आनंदस्वामी उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। शहर में घूमते-घूमते अचानक आनंदस्वामी को गुणातीतानन्दस्वामी के आगे महाराज दिखाई पड़े। आनंदस्वामी को आश्चर्य हुआ कि यह क्या? इतने में तो गुणातीतानन्दस्वामी महाराज को कहते सुनाई पडेः महाराज ! आप उल्टे पग चल रहे हो, पीछे कोई पत्थर इत्यादि आ जाये तो दिखाई नहीं पड़ेगा। इसलिये सीधे पांव से आगे देखकर चलो तो अच्छा ! यह सुनकर महाराज हँसे और कहा : **तुम्हारे जैसे साधु को पीठ कैसे दिखायें?** पीछे चलते आ रहे आनंदस्वामी ने यह सारा वार्तालाप सुना। एक तो स्वामी की साधुता, अखंड नैसर्गिकी ब्राह्मीस्थिति और सेवकभाव से आनन्दस्वामी ने स्वामी की खूब महिमा समझ थी और अब देखा कि महाराज ने स्वयं स्वामी को दर्शन दिये, उससे भी अधिक, कहा कि तुम्हारे जैसे साधु को पीठ कैसे दिखायें। यह सब देख सुनकर आनन्दस्वामी को गुणातीतानन्दस्वामी के प्रति अगाध प्रेम हुआ। मन-ही-मन-स्वामी की महिमा का विचार करते हुए आनन्दस्वामी ने सोचा कि महाराज तो स्वामी के निरंतर प्रत्यक्ष है परन्तु आज स्वामी की महिमा मुझे समझाने महाराज ने प्रत्यक्ष दर्शन कराया !

☆ ☆ ☆

गुरुपूर्णिमा.....गुरुपूजन

'गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपकी, जिन गोविन्द दियो मिलाय।'

'गुरु शब्द सुनते ही मन में सहज ही एक अलग सी पवित्रता का एहसास होता है। कैसे दिव्य और द्वन्द्व रहित शब्द ! इस शब्द का विचार करते ही आंखों के सामने पवित्र, निर्मल, निर्लोभी, निष्कामी, निःस्वार्थी मूर्ति की कल्पना अपने आप हो उठती है। परन्तु 'गुरु' शब्द की सच्ची सार्थकता तो उसके होकर जीने वाले शिष्यों से है।

प्राचीनकाल से ही शास्त्रों में 'गुरु' की महिमा बताई गई है। भारत की भूमि ऋषियों, संतों की भीष्म तपस्या के कारण खूब पवित्र मानी गई है। शिवाजी, गुरुगोविन्दसिंह, सम्राट अशोक, श्री रामचन्द्र, भगवान श्रीकृष्ण इत्यादि राजाओं व स्वयं प्रभु के स्वरूपों ने भी किसी-न-किसी रूप में गुरु को अपनाकर आने वाली पीढ़ियों के लिये आदर्श स्थापित किया है। स्वयं भगवान स्वामिनारायण ने सद्. रामानन्दस्वामी को गुरु का स्थान देकर 'गुरु बिना गत नाहीं' की उक्ति को चरितार्थ किया।

आध्यात्मिक विकास के लिये शिष्य के जीवन में गुरु की अनिवार्यता है ही। सामान्य जीव की कोई ताकत नहीं कि विद्धत्ता से, निजी शक्ति से, असीमित बुद्धि से, स्वप्रयत्न से, अपनी इन्द्रियों-अन्तःकरण का प्रवाह प्रभु सम्मुख कर पाये। जगत की झूठी मान्यताओं, काल, कर्म, माया के घेरे को तोड़कर आत्मिक उन्नति के लिए हम क्या साधन कर पायेंगे? सही अर्थ से देखें तो जिस प्रकार श्वास लेने के लिये वायु की जरूरत है उसी प्रकार संस्कारी, शुद्ध, पवित्र अनोखा जीवन जीने के लिए सच्चे गुरु की आवश्यकता है ही। आत्यंतिक कल्याण, मोक्ष का द्वार खुलना तो गुरु की कृपा द्वारा ही संभव है। ग्लानि, चिन्ता, भय, उदास, दुःख-शोक, सांसारिक झंझटों से ऊपर उठाकर अखंड आनंद की भूमिका में सच्चा गुरु ही ले जा सकता है। गुरु **अनुपम है, अपरिमेय है, अनादि है, अनन्त है, नित्य है, सत्य है, ज्ञान है, प्रेम है, परमानन्द है, असीम है, अज है, अकल है, अगम्य है, अनिर्देश्य है, अनिर्वचनीय है** और इससे भी अधिक परम सुहृद् है। किसी भी शब्द से, किसी भी बुद्धि वृत्ति से, उसको व्यक्त नहीं किया जा सकता।

स्वामिनारायण संप्रदाय में गुरु गुणातीत द्वारा ऐसी निर्मल गुरु परंपरा अखण्डित रही है। संप्रदाय के प्रवर्तक सद्. रामानन्दस्वामी, पूर्ण पुरुषोत्तम श्री सहजानन्दस्वामी, मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी, पू. जागा स्वामी, पू. भगतजी महाराज, पू. कृष्णजी अदा, पू. शास्त्रीजी महाराज, गुरुवर्य पू. योगीजी महाराज, करुणामूर्ति पू. काकाजी महाराज और अब पू. पप्पाजी महाराज, पू. हरिप्रसादजी-स्वामिजी, पू. महंत स्वामीजी, पू. अक्षरविहारी-स्वामीजी, पू. साहेब, पू. हरिभाई साहेब जैसे भगवत्स्वरूप संतों द्वारा ज्योत से ज्योत प्रज्जवलित ही है। गुरु गुणातीत द्वारा स्वामिनारायण संप्रदाय अखंड सुहागिन का संप्रदाय है। स्वयं प्रभु का स्वरूप होते हुए भी पूर्णतया त्यागपूर्ण निर्मल विरल साधुता और पवित्रता का जीवन जीकर वे शिष्यों के लिये गुरुभक्ति की अनोखी मिसाल छोड़ गये। मू.अ.मू. गुणातीतनंद स्वामी स्वयं महाराज का रहने का अक्षरधाम थे, अनादि स्वरूप थे तब भी महाराज के प्रति ही नहीं, बल्कि महाराज के अल्प संबंध वालों के भी दास बनकर रहे। उनके बाद आने वाले स्वरूपों ने भी गुरुपरंपरा अत्यधिक सतर्कता से जागरूकता रहकर चालू ही रखी। पू. भगत जी महाराज ने अपने गुरु गुणातीतानन्दस्वामी के प्रति एक अनोखी भक्तिअदा करी.....गुरुभक्ति का ऐसा उदाहरण मिलना नामुकिन तो नहीं पर खूब कठिन अवश्य है। अपनी कल्पना में भी न था न आ सके ऐसी गुरु की

प्रसन्नता पाने की ही केवल चाहना....सतत निगाह केवल अपने गुरुहरि की ओर....उनके जीवन के प्रसंग हमारे लिये आज भी प्रेरणारूप हैं।

एक बार मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी ने अपने प्रिय प्रागजी भक्त (भगतजी महाराज) को बुलाकर कहाः ''आचार्य रघुवीरजी महाराज पधारने वाले है, सो मंदिर के सभामंडप के लिये एक अच्छी चंदनी सिलनी है। पर मेरे पास कठोर में उसके लिये पैसे नहीं है।'' प्रागजी भक्त को तो तनिक भी तर्क नहीं उठा कि फिर इतनी बड़ी चंदनी के लिये पैसा कहां से आयेगा? उन्हें तो स्वामी की आज्ञा में ही लाखों रुपये दिखाई पड़ते थे। सेवा के साथ-साथ व्यावहारिक बुद्धि की कुशाग्रता भी भगतजी में खूब थी। स्वामी की इच्छा है सो रुपये तो बरसने वाले हैं–यूं वे मानते ही थे। और...उनके पास आते हरिभक्तों से पैसे इकट्ठे कर लिये और कपड़ा लाकर चांदनी सिलनी शुरु कर दी। दिन हो या रात, देह की परवाह किये बिना बस स्वामी को लूट लेने की अत्यधिक चाह से प्रागजी भक्त लग पड़े। वे जानते थे कि स्वामी ने यह मौका खूब कृपा करके मुझे कुछ देने ही दिया है....वह किसी भी कीमत मुझे खोना नहीं है। **दस दरजी जो काम दो महीने दिन रात बैठकर भी पूरा न कर सके वह काम उन्होंने अकेले ही 41 दिन में पूरा करा** !!! भक्ति अदा करने की कैसी अनोखी श्रद्धा ! गुरु गुणातीत के प्रति कैसी प्रीति ! रोज सुबह तीन बजे उठकर आधी रात तक काम करना। भगतजी की चंदनी सीने की लगन को देखकर स्वामी बोले थे 'ऐसी भगवान की मूर्ति की लगन रहे तो कुछ बाकी रहे नहीं।' तब भगतजी महाराज ने हाथ जोड़कर कहा था 'स्वामी, वह तो आपके हाथ में है।'

भगतजी की यह भक्ति देखकर स्वामी अत्यन्त राजी हुए और कुछ भी मांगने को कहा। सब सुख, ऐश्वर्य, धन इत्यादि देने के प्रलोभन दिये, पर प्रागजी भक्त हाथ में आई चिंतामणि को कैसे खोने देते? उन्हें तो जगत के भौतिक सुखों की नहीं, प्रभु की मूर्ति लूटने की चाह थी। त्रिलोकी के सुख ०को ठोकर मारकर भगतजी बोलेः 'स्वामी, तेरह वर्ष गोपालानन्दस्वामी का समागम करा और नौ वर्ष से आपके समागम में हूं, परन्तु स्त्री मे या धन में सुख है ऐसा तो कभी सुना नहीं। इसलिये अगर आप सचमुच राजी हुए हो और मुझे कुछ देना ही चाहते हो तो–

1. मुझे आपका ज्ञान दो,
2. आपका रहने का अक्षरधाम बताओ और
3. मेरे जीव को सत्संगी करो–यह तीन वर दो।

स्वामी ने खूब कहा पर भगतजी अपनी मांग पर अडिग रहे और कहा कि मुझे अपने चरणों की सेवा में अखंड रखना। स्वामी भगतजी की उत्कृष्ट श्रद्धा देखकर अत्यन्त राजी हुए.....वह बोलेः 'ऐसा ज्ञान लेना हो तो यहां अखंड रहो, क्योंकि निवृत्ति धर्म, वैराग्य और आत्मनिष्ठा के बिना सिद्धदशा आ नहीं सकती।'

भगतजी ने स्वामी की आज्ञा मस्तक पर झेल ली। स्वामी ने उनके मस्तक पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिये। तब से प्रागजी भक्त हमेशा के लिये स्वामी के साथ ही रहे !

कैसा गुरु शिष्य का संबंध ! कैसी गुरु के अन्तर को छू लेने वाली भक्ति ! तो बिना मांगे गुरु के दिल से आशीर्वाद फिसल ही जायेंगे न?

गुरुपूर्णिमा का परम पवित्र अवसर नजदीक आ रहा है....गुरु शिष्य के संबंध को प्रगाढ़ करने का यह महत्वपूर्ण दिन है। इस दिन शिष्य पुष्प, चंदन, भेंट आदि देकर अपने गुरु का पूजन करता है। प्राचीन काल से चली आ रही है यह परम्परा ठीक है, किन्तु सच्चा गुरुपूजन 'स्व' का समर्पण करने में है जिससे कि गुरु गुणातीत राजी होते हैं.... गुरुहरि प.पू. काकाजी महाराज के शब्दों में–

अपने मन, बुद्धि, चित्त, अहंता, ममता के पुराने ढांचे को पूर्णतया तोड़कर, मन का राज्य छोड़कर गुरुराज्य में प्रवेश होना है और यही है आंतरपूजा। एकलव्य का ही उदाहरण लें तो गुरुशिष्य का संबंध अपनी आंखों के सामने सहज साकार हो उठता है। एकलव्य बाण विद्या में खूब निपुण था और जो अंगूठा बाणविद्या की कला में सबसे अधिक सहायक था वही अपने गुरु द्रोणाचार्य के मांगने पर बिना कुछ विचार किये काटकर भेंट में दे दिया।

तो अब, गुरुपूर्णिमा के परम पवित्र अवसर पर प्रत्यक्ष स्वरूपों की निश्चित योजना में हम सहायरूप हो जायें...गुरुहरि योगीजी महाराज ने 4 साल तक लगातार अपमान सहा....उनके बाद प.पू. काकाजी ने गुरुहरि योगीजी महाराज की प्रसन्नता पाने केवल कांचन, कामिनी, कीर्ति का ही त्याग नहीं करा बल्कि अपनी देह, मान-अपमान, यश-अपयश की परवाह किये बिना अपना सर्वस्व गुणातीत समाज में याहोम कर दिया ! हम उसी सुहृद् सम्राट के अपने आपको पुत्र कहलवाते हैं तो अब अपनी फर्ज भी सब कुछ लुटाकर इनमें खो जाने की है। वह ही सही अर्थ में सच्चा गुरुपूजन, सच्ची गुरुभक्ति है।

तो आइये, हम सभी मिलकर 21 जुलाई सोमवार के महामंगलकारी दिन प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. हरिप्रसादस्वामीजी के पवित्र चरणों में total उनके होकर जीवन जीने की दृढ़ संकल्प करें। स्वरूपों के संप, सुहृद्भाव, एकता के मूलभुत सिद्धान्त को साकार करने मिलजुल कर सुहृद्भाव के कलश चढ़ाये....यही गुरुपूर्णिमा के पवित्र अवसर पर गुरुचरण में अन्तर की प्रार्थना।

☆ ☆ ☆

ब्रह्मप्रवाह.....

[मू.अ.मू. गुणातीतानन्दस्वामी की तरह ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज उनके जीवनकाल के दौरान देश-विदेश में–सर्वत्र धून और कथावार्ता का सतत धोध बहाते रहे। उन्होंने हमारे लिये इतनी धून्य, इतना भजन किया है कि उनके भजन के प्रताप से आज हम सभी उजले हैं–अरे ! सब सांस ले रहे हैं और उनके प्रताप से ही जीवंत रहेंगे ! (वच. सा. 16) न मानी जा सके ऐसी–काल्पनिक लगे ऐसी यह बात है, पर एक वास्तविकता है जिसे कभी हम भूले नहीं !

गला दुःखने आवे तब भी सतत बातें करते ही रहने के पीछे उन्हें एक ही लगन थीं 'कैसे भी करके मेरी इस बात को तुम समझो, पकड़ो और लेकर सदासुखी होओ....कैसे भी करके इस जीव को बापा के भव्यरूप का विज्ञान हो जाये और यह जीव किसी भी तरह ब्रह्मरूप हो जाये...' बस, यही एक उनकी लगन, उनका निशान और यही एक उनका उद्यम–परिश्रम था ! अपने खून का पानी कर दिया उन्होंने इसके लिये ! आशीर्वाद भी खूब बरसाये.....

सुनने वाला एक हो या बड़ी सभा लगी हो, उन्हें कभी कोई फर्क नहीं पड़ा। पात्र-कुपात्र भी उन्होंने कभी देखा नहीं। छोटा बच्चा ही क्यों न हो? वे तो उतने ही प्रेम से उसके साथ भी मन को सदंतर छोड़ देने की–चैतन्यभूमिका की अगम बातें करते। उनके मन में तनिक भी फर्क नहीं था। जो-जो उनके संबंध में आये उन सभी को इन्होंने निभाये रखा। कैसे निभाये ! जिस-जिसने उनके यह शब्द सुने होंगे–'निभाय.....निभाय.....' वे अब भी कानों में गूंजते होंगे और याद आते ही आज भी आँखें आँसुओं से छलक जाती होंगी।

अपनी अहम् की वृत्तियों के घेरे में, करोड़ों जन्मों से मन के साथ की अपनी यारी को लेकर, पंचविषयों के रमणीय रागों में, अपनी जड़ता की आदतों के कारण उनकी वे बातें हमें अकल और अगम लगती थी। कई बार तो समझते हुए भी हमने इनकी बातों को पकड़ी नहीं....आंख, कान,

मूंद लिये.....उपेक्षा कर लेते ! उनकी बातों से हमारे अहम् को जब चोट लगती थी तब हम उदासी में भी चले जाते....और यह सब जानते हुए भी हमारे प्रत्येक के प्रति इस करुणामूर्ति की ममता में ज्वारभाटे आये कभी किसी ने नहीं देखा होगा।

प.पू. पप्पाजी के शब्दों में–

'वे जो समझाना चाहते थे वह हम समझे नहीं और अपनी-अपनी रीत से स्वभावयुक्त साधना करते रहे। इससे पू. काकाजी को खूब दुःख रहा करता था। तो अब हमें एक जबरदस्त इलेक्ट्रिक शॉक देने और तीव्र अन्तर्दृष्टि करा के वे जो कराना चाहते थे उसे करने के लिए हम कृतनिश्चयी बने, इसलिये वे स्वयं ही अपनी स्वेच्छा से अंतर्धान हुए–जो हमारे सब के लिये खूब दुःखद और शरमजनक प्रसंग है।'

तो अब, पत्रिका के गुरुपूर्णिमा के इस अंक से 'ब्रह्मप्रवाह....' के इस स्तंभ द्वारा उनके द्वारा करी बातों से या उनके साथ हुई बातों में से या उनके लिखे ऐसे पत्रों से या उनके द्वारा बरसाये आशीर्वादों से आंशिक पंक्तियां यहां देते रहेंगे।

ब्रह्मस्वरूप संत की वाणी सनातन है–शाश्वत है, संजीवनी औषधि है। गुणातीतभावना भी अमर है, अविनाशी है, अखंड है, प्रगट है, मूर्तिमान है। अब भी ऐसी ही जीवंत और सक्रिय है। तो, उनकी इन बातों को पढ़कर अब तो विचारें, मनन करके धारें और सब एक होकर प.पू. काकाजी सचमुच हमसे जैसे वर्तन की अपेक्षा रखते थे वैसे करने लग जायें.....]

☆ ☆ ☆

गुरुपूर्णिमा–'दिव्यएकता' होने के शुभाशिष–सभी को ! तो प्रारंभ में ही गुरु को पधरा कर–फैसले सभी उन्हें ही करने देना। तब तक 'समझदारीपूर्वक धीरज' और 'गुरुमुखी सक्रियतायुक्त' सत्कर्म किये जाना जिससे कि जरा सी भी भूल नहीं होगी। या तो खाली हो जाना, या खो जाना और या तो लय हो जाना या तो फिर जो भी करने आता हो, उसका अतिक्रमण और लगनी लगा देनी। तो जरूर धरतीकंप-आध्यात्मिक विकास में होगा और दिव्यचेतना में प्रवेश कर लेंगे। उसके पश्चात् अखंड जाग्रत रहने की प्रार्थना 'प्रायश्चित्रूप में'–पू. पुरुषोत्तमस्वामी को लिखवाये छः वचनामृत के आखिरी पहरे से मुताबिक करते जाना तो जीवन की सर्वांगी धड़ाई होकर ब्राह्मीस्थिति सरलता से सिद्ध हो जायेगी।

प.पू. काकाजी महाराज

फीला, 5.7.73

व्रतोत्सवसूची

1. दि. 16.7.86 बुधवार नौमी, श्री हरिजयंती
2. दि. 18.7.86 शुक्रवार देवशयनी एकादशी, निर्जला व्रत, चातुर्मास प्रारंभ, आज से चातुर्मास के विशेष नियम लिये जाते हैं।
3. दि. 21.7.86 सोमवार गुरुपूर्णिमा-आषाढ़ीपूर्णिमा
4. दि. 1.4.86 शुक्रवार एकादशी, व्रत
5. दि. 10.8.86 रविवार पू. कृष्णजी अदा का प्रागट्य दिन
6. दि. 14.8.86 गुरुवार नौमी, श्री हरिजयंती

PUBLISHED By SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY,
A 103, Ashokvihar-III, Delhi-110 052. India, Tel. 7128838
Printed at R.P.,Printers, Shahdara, Delhi-110 032